जैन

पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

वर्ष : 28, अंक : 15
नवम्बर (प्रथम) 2005

सम्पादक : पण्डित रतनचन्द भारिल्ल
प्रबन्ध सम्पादक : पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी

आजीवन शुल्क : 251 रुपये
वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

प्रभु वीर ने दिव्य-ध्वनि में स्वभावगत स्वतंत्रता की घोषणा के साथ-साथ पर्याय में पूर्ण स्वतंत्रता की प्राप्ति के लिये स्वावलम्बन का मार्ग बताया।

- ती.महावीर और सर्वो.तीर्थ,पृ.७२

आठवाँ आध्यात्मिक शिक्षण शिविर सम्पन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन में पण्डित टोडरमल सर्वोदय ट्रस्ट द्वारा दिनांक ६ अक्टूबर से १५ अक्टूबर, २००५ तक आठवें आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया। दिनांक ६ अक्टूबर को हुये उद्घाटन के समाचार विगत अंक में प्रकाशित किये जा चुके हैं।

शिविर में मुख्य प्रवचन के रूप में प्रतिदिन प्रात: तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के समयसार के सर्वविशुद्धज्ञानाधिकार पर मार्मिक प्रवचन हुये तथा रात्रि में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री, देवलाली के मोक्षाधिकार पर सारगर्भित प्रवचन हुये।

मुख्य प्रवचन से पूर्व रात्रि में पण्डित पूनमचन्दजी छाबड़ा, पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल, डॉ. दीपकजी शास्त्री जयपुर एवं पण्डित शांतिकुमारजी पाटील के प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ।

शिक्षण कक्षाओं में पण्डित रतनचन्दजी भारिल्ल द्वारा **षट्कारक,** ब्र. यशपालजी जैन द्वारा **गुणस्थान विवेचन,** पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री द्वारा **मोक्षमार्गप्रकाशक** एवं **नयचक्र,** पण्डित शांतिकुमारजी पाटील द्वारा **द्रव्यसंग्रह,** पण्डित संजीवकुमारजी गोधा द्वारा **क्रमबद्धपर्याय** एवं पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री द्वारा **लघु जैन सिद्धान्त प्रवेशिका** की कक्षाओं के माध्यम से धर्मलाभ मिला।

दोपहर की व्याख्यानमाला में डॉ. श्रेयांसकुमारजी शास्त्री, पण्डित जितेन्द्रकुमारजी राठी, डॉ. भागचन्दजी शास्त्री, पण्डित रमेशचन्दजी जैन (लवाण), पण्डित धर्मेन्द्रजी शास्त्री, पण्डित प्रवीणजी शास्त्री, पण्डित राजेन्द्रजी बंसल, पण्डित कमलचन्दजी एवं पण्डित विक्रान्तजी पाटनी के विविध विषयों पर प्रवचनों का लाभ मिला।

दिनांक १४ अक्टूबर को श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जयपुर के छात्रों द्वारा **पंचलब्धी-एक अनुशीलन** विषय पर मार्मिक गोष्ठी का आयोजन किया गया; जिसकी अध्यक्षता पण्डित विनयकुमारजी पापडीवाल जयपुर ने की।

शिविर के आमंत्रणकर्त्ता श्रीमती मीना-अनूप शाह मुम्बई, श्री प्रेमचन्दजी बजाज कोटा, डॉ. संजयकुमारजी राजीवकुमारजी सुपुत्र श्री शिखरचन्दजी सर्राफ विदिशा तथा स्व. राजमलजी पाटनी की स्मृति में उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रतनदेवी पाटनी एवं सुपुत्र श्री अशोककुमारजी पाटनी कोलकाता थे। शिविर में चौंसठऋद्धि विधान का आयोजन डॉ. संजयकुमारजी राजीवकुमारजी सुपुत्र श्री शिखरचन्दजी सर्राफ विदिशा, श्री दिग. जैन मुमुक्षु मण्डल कोलकाता एवं श्रीमती प्रेमाबाई ध.प. श्री शांतिलालजी सर्राफ परिवार खिमलासा द्वारा किया गया।

सभी कार्यक्रमों को सफल बनाने में टोडरमल महाविद्यालय के विद्यार्थियों का अपूर्व योगदान रहा।

शिविर के मध्य डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा लिखित **रक्षाबन्धन और दीपावली** नामक पुस्तक का विमोचन हुआ। विमोचन के पश्चात् पाँच दिन में ही लगभग १०,००० प्रतियाँ बिक गई।

शिविर में विभिन्न प्रान्तों से आये लगभग ८८४ साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया। इस अवसर पर कुल १६ हजार रुपयों का सत्साहित्य तथा २७८० घंटों के सी.डी.व ऑडियो कैसिट्स घर-घर पहुँचे। जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान (हिन्दी व मराठी) के अनेक सदस्य बनें।

वेदी शिल्यान्यास सम्पन्न

मदनगंज-किशनगढ़ (राज.) : यहाँ दिनांक १६ से २१ नवम्बर,०५ तक आयोजित होनेवाले नेमिनाथ पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की पूर्व बेला में दिनांक १६ अक्टूबर को वेदी शिलान्यास, पत्रिका विमोचन एवं भूमिशुद्धि का आयोजन प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद के कुशल निर्देशन में किया गया।

इस अवसर पर प्रात: पण्डित सुनीलजी 'धवल', भोपाल के सान्निध्य में सम्मेदशिखर विधान हुआ। पश्चात् भगवान महावीरस्वामी की वेदी का शिलान्यास श्री मोहनलालजी सेठी जयपुर तथा समवशरण जिनमंदिर की वेदी का शिलान्यास श्री निहालचन्दजी जैन पीतल फैक्ट्री जयपुर के करकमलों से हुआ। शिलान्यास के पूर्व पण्डित संजीवकुमारजी गोधा के प्रवचन का लाभ मिला।

सभा की अध्यक्षता श्री माणकचन्दजी गदिया अजमेर ने की। मुख्यअतिथि के रूप में श्री अनूपभाई शाह मुम्बई मंचासीन थे। इस अवसर पर महोत्सव के कार्याध्यक्ष श्री प्रदीपकुमारजी चौधरी ने सभा को सम्बोधित करते हुये सभी को पंचकल्याणक में पधारने का हार्दिक आमंत्रण दिया।

जयपुर, अजमेर, भीलवाड़ा, विजयनगर आदि स्थानों से पधारे लगभग ८०० साधर्मियों के साथ विशाल जुलूस नवनिर्मित जिनमंदिर से शौरीपुर नगरी, आर. के. वाटिका गया। जहाँ नगरपालिका अध्यक्ष श्री जगदीपजी गूजर की अध्यक्षता में आयोजित सभा में श्री जगनमलजी सेठी जयपुर द्वारा पंचकल्याणक की ऐतिहासिक विशाल पत्रिका का विमोचन किया गया। भूमिशुद्धि नेमिकुमार के माता-पिता बननेवाले श्रीमती रतनदेवी-मोती चन्दजी लुहाड़िया जोधपुर के करकमलों से हुई।

सभी कार्यक्रम श्री राजेन्द्रकुमारजी चौधरी के कुशल संयोजन में सम्पन्न हुये। **ह्न भागचन्द चौधरी**

सम्पादकीय –

नींव का पत्थर

13

ह्न रतनचन्द भारिल्ल

ज्योत्स्ना ने कहा ह्न ''मैं सर्वप्रथम **'चार अभाव के माध्यम से वस्तुस्वातंत्र्य**' की सिद्धि पर प्रकाश डालने के लिए अनेकान्त शास्त्री को आमंत्रित करती हूँ। कृपया अनेकान्तजी पधारें और विषय का प्रवर्तन करें।''

महावीर जयन्ती की पूर्व संध्या में गोष्ठी की प्राथमिक औपचारिकताओं के पश्चात् अनेकान्त शास्त्री ने मंचासीन महानुभावों एवं सभासदों को संबोधित करते हुए विषय का प्रवर्तन किया।

उन्होंने कहा ह्न ''यद्यपि आज के भाषण प्रतियोगिता का विषय 'चार अभाव' आम सभाओं में अचर्चित रहने से नवीन श्रोताओं को नया सा लगेगा; परन्तु भगवान महावीर की अहिंसा और अपरिग्रह की बहुचर्चित बात इस विषय को जाने बिना अधूरी ही रह जाती है; क्योंकि अहिंसा और अपरिग्रह तो धर्मवृक्ष के फल हैं, मोक्ष महल के कंगूरे हैं। धर्मवृक्ष की जड़ या मोक्षमहल की नींव का पत्थर तो वस्तुस्वातंत्र्य का सिद्धान्त है, जिस पर मोक्षमहल अनन्तकाल तक खड़ा रहता है। जैसे नींव के बिना महल की एवं कंगूरों की कल्पना भी नहीं की जा सकती; उसीप्रकार वस्तु स्वातंत्र्य को तथा वस्तु के भाव-अभाव, सत्-असत्, एक-अनेक, चित्-अचित्, नित्य-अनित्यादि धर्मों को जाने-समझे बिना मोक्षमहल की प्रथम सीढी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति भी नहीं होगी और प्रथम सीढी के बिना अहिंसा एवं अपरिग्रहरूप कंगूरों सी शोभा कहाँ-कैसे होगी ? वस्तुस्वातंत्र्य के सिद्धान्त की श्रद्धारूप सम्यग्दर्शन रूपी धर्मवृक्ष के बिना अहिंसा और अपरिग्रह के फल कहाँ फलेंगे ?

यहाँ ज्ञातव्य है कि वस्तुस्वातंत्र्य और अभावों का अतिनिकट का संबंध है। अधिकांश जैनेतर दर्शनों में 'अभाव' नामक सिद्धान्त की चर्चा है; परन्तु वह चर्चा वस्तुस्वातंत्र्य की नींव का पत्थर नहीं बन सकी; क्योंकि वे अपने मूल उद्देश्य तक नहीं पहुँचे, जबकि यह भी धर्मोपलब्धि में उपयोगी विषय है। इसे भी जन-जन का विषय बनाना ही होगा, अन्यथा धर्माचरण सार्थक नहीं हो सकेगा।''

जिनसेन ने बीच में ही प्रश्न किया ह्न ''अनेकान्तजी ! मैंने अबतक यह तो सुना था कि हिन्दुस्तान में हिन्दूधर्म के सिवाय, बौद्ध धर्म, जैनधर्म, ईसाईधर्म और इस्लाम धर्म आदि अनेक धर्म और उनके अनेकानेक भेद-प्रभेद हैं; पर ये नित्य-अनित्य, भाव-अभाव आदि धर्मों के नाम मैंने कभी नहीं सुनें। ये भाव-अभाव धर्म क्या है ? मैंने तो कभी नहीं सुने।''

अनेकान्तजी ने उत्तर दिया ह्न अरे भाई ! तुम जिन धर्मों की बात कर रहे हो ह्न ये कोई धर्म नहीं हैं, ये तो सम्प्रदाय हैं। इनमें कुछ तो व्यक्तियों के नाम पर हैं और कुछ मान्यताओं के आधार पर हैं। वस्तुत: अनादिनिधन सनातन धर्म तो वस्तुओं का स्वभाव है। इसी संदर्भ में अनन्तधर्मात्मक वस्तु को अनेकान्त कहते हैं। यह अनेकान्त वस्तु का धर्म है। जिस वस्तु में अनन्त धर्म पाये जायें, वह वस्तु अनेकान्तस्वरूप है, अनन्तधर्मात्मक है, इस वस्तुधर्म के परस्पर विरोधी जोड़े होते हैं। जैसे नित्य-अनित्य, एक-अनेक, भिन्न-अभिन्न, सत्-असत्, तत्-अतत्, भाव-अभाव आदि।

जिसप्रकार स्व की अपेक्षा से सद्भाव धर्म है, उसीप्रकार पर की अपेक्षा से अभाव भी पदार्थ का धर्म है। इस अभाव धर्म के सद्भाव के कारण ही सब वस्तुएँ अपने-अपने अस्तित्व में जुदी-जुदी रहती हैं। यदि यह अभावधर्म न होता तो सब वस्तुएँ मिलकर एकमेक हो जातीं, सर्व वस्तुएँ सर्वात्मक हो जाती।

'अभाव' की परिभाषा करते हुए आचार्य ने बताया है कि ह्न ''किसी एक पदार्थ का अन्य पदार्थों में न होना 'अभाव' है। यद्यपि यह 'अभाव' नामक वस्तुधर्म छहों द्रव्यों में सद्भावरूप से ही विद्यमान है; परन्तु परद्रव्य की अपेक्षा से देखें तो स्व-वस्तु परवस्तु नहीं है। इसप्रकार एक द्रव्य का अस्तित्व दूसरे द्रव्य में न होना ही अभाव है। प्रत्येक द्रव्य में एक ऐसी 'अभावशक्ति' का सद्भाव है कि जिसकी वजह से परद्रव्य का उसमें प्रवेश नहीं होता।

ये अभाव चार प्रकार के होते हैं ह्न १. प्राक् अभाव, २. प्रध्वंस अभाव, ३. अन्योन्य अभाव और ४. अत्यन्त अभाव।

प्रथम दो अभावों की परिभाषायें इसप्रकार हैं ह्न उत्पत्ति से पूर्व कारण में कार्य का अभाव प्राक् अभाव या प्रागभाव है अर्थात् पूर्व पर्याय में वर्तमान पर्याय का अभाव प्रागभाव है। इसीप्रकार वर्तमान पर्याय का आगामी पर्याय में अभाव प्रध्वंसाभाव है। उदाहरणार्थ हम भगवान महावीर स्वामी की तीन पर्यायें पकड़ें ह्न १. मारीचिरूप भूतकाल की पर्याय २. सिंह की वर्तमान पर्याय और ३. भविष्य की महावीर पर्याय। इनके बीच में हुई पर्यायों को बिलकुल गौण कर दें, फिर देखें कि वर्तमान सिंह पर्याय का भूतकाल में हुई मारीचि पर्याय में जो अभाव है, वह प्रागभाव है। इसीप्रकार ह्न सिंह की पर्याय का महावीर की पर्याय में अभाव प्रध्वंसाभाव है।

दूसरा उदाहरण : दही (वर्तमान पर्याय) दूध (भूतकाल की पूर्व पर्याय) तथा छांछ (भविष्य की पर्याय) को देखें।

दही वर्तमान पर्याय का पूर्व दूध की पर्याय में अभाव प्रागभाव है। उसी दही पर्याय का आगामी छांछ की पर्याय में अभाव प्रध्वंसाभाव है।

आत्मा पर घटायें तो आत्मा के जो छहढाला में तीन भेद हैं ह्न १. बहिरात्मा, २. अन्तरात्मा और ३. परमात्मा। अन्तरात्मा वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय बहिरात्मा में अभाव प्रागभाव और आगामी परमात्मा पर्याय में अन्तरात्मा का अभाव प्रध्वंसाभाव है।

प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव एवं अन्योन्याभाव वस्तु के पर्याय स्वभाव पर लागू होते हैं और पर्याय की स्वतंत्रता को प्रगट करते हैं। अन्तिम अत्यन्ताभाव दो भिन्न-भिन्न द्रव्यों पर लागू होता है एवं द्रव्यों की स्वतंत्रता को बताता है।

प्रागभाव बताता है कि एकसमयवर्ती वर्तमान पर्याय का सद्भाव या अस्तित्व मात्र वर्तमान समय में ही है। उसी द्रव्य की निकटवर्ती भूत व भावी पर्यायों में उसकी उपस्थिति न होने से उसके द्वारा उनका कुछ भी भला-बुरा करने एवं सहायरूप होने आदि में कुछ भी योगदान संभव नहीं है। अत: वर्तमान पर्याय न तो अपनी द्रव्य का ही भूत व भावी एकक्षणवर्ती पर्यायों में कुछ परिवर्तन या हस्तक्षेप कर सकती है और न वे एक ही द्रव्य की भूत व भावी पर्यायें वर्तमान पर्याय में हस्तक्षेप या सहयोग कर सकती हैं। अत: प्रत्येक द्रव्य की एकसमयवर्ती पर्याय पूर्ण स्वतंत्र है, इसप्रकार प्रागभाव व प्रध्वंसाभाव वर्तमान पर्याय की स्वतंत्रता बताकर वस्तुस्वातंत्र्य के सिद्धान्त का पोषण करते हैं। तथा तीसरा ह्न अन्योन्याभाव केवल पुद्गल द्रव्य की दो वर्तमान पर्यायों पर लागू होता है। एक पुद्गलद्रव्य की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्गल द्रव्य की वर्तमान पर्याय में अभाव को अन्योन्याभाव कहते हैं। यह परमाणु-परमाणु की स्वतंत्रता की घोषणा करता है। चौथा ह्न अत्यन्ताभाव एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में अभाव बताकर प्रत्येक द्रव्य का स्वतंत्र अस्तित्व कायम रखता है। प्रत्येक द्रव्य सदैव एकत्व स्वरूप में रहता है। अपने स्वभाव को कभी नहीं

छोड़ता और अपना स्वभाव छोड़े बिना तथा अन्यरूप हुए बिना अन्य का कार्य करना संभव नहीं है, क्योंकि इनमें परस्पर में अत्यन्ताभाव की वज्र की दीवार खड़ी है। इस अत्यन्ताभाव को जानने एवं इसकी श्रद्धा से धर्मसंबंधी लाभ यह है कि जब दो द्रव्यों में अत्यन्त अभाव विद्यमान है तो फिर अन्य द्रव्य मेरा भला-बुरा कैसे कर सकता है ? अत: न दूसरों से भय रहता है और न दूसरों से सुख की आशा ही रहती है। इसप्रकार अभाव के चारों भेद वस्तुस्वातंत्र्य की सिद्धि करते हैं। जो इन्हें समझ कर इनकी प्रतीति करते हैं। श्रद्धा करते हैं, वे अल्पकाल में ही राग-द्वेष से मुक्त होकर वीतरागी बन जाते हैं।

अनेकान्त ने श्रोताओं से प्रश्न किया ह्न ''चारों अभावों का स्वरूप समझ में आया ?''

विराग ने हाथ ऊँचा करते हुए थोड़ा रुक कर कहा ह्न ''हाँ, आ गया।''

अनेकान्त ने कहा ह्न ''आ गया तो बताओ देह और आत्मा में कौन-सा अभाव है, सकारण उत्तर दो।''

विराग ने कहा ह्न ''अत्यन्ताभाव है, क्योंकि देह और आत्मा भिन्न-भिन्न दो द्रव्य हैं और द्रव्यों के बीच अत्यन्ताभाव होता है।''

अनेकान्त ने पुन: पूछा ह्न ''पुस्तक और घड़े में कौन-सा अभाव है ?''

अनुराग ने हाथ उठाया और संकेत पाकर उत्तर दिया ह्न ''अन्योन्याभाव, क्योंकि पुस्तक और घड़ा दोनों पुद्‌गल द्रव्य की वर्तमान पर्यायें हैं।''

अनेकान्त ने प्रोत्साहित करते हुए कहा ह्न ''बहुत अच्छा...पर ध्यान रखें प्रश्न सुनकर पहले हाथ उठायें, फिर जिससे ह्न उत्तर देने को कहें, वही उत्तर दे। इससे सबको सोचने का अवसर मिलता है।

अच्छा बताओ ह्न ''आत्मा अनादि से केवलज्ञानमय है ह्न ऐसा माननेवाले ने कौन-सा अभाव नहीं माना और क्यों ?....''अनेकान्त ने सम्यक् की ओर संकेत किया।

सम्यक् ने कहा ह्न''प्रागभाव, क्योंकि केवलज्ञान तो ज्ञानगुण की पर्याय है, अत: केवलज्ञान होने के पूर्व की मतिज्ञानादि पर्यायों में उसका अभाव है।''

अनेकान्त ने कहा ह्न ''आशा है, चार अभावों का स्वरूप तुम्हारी समझ में अच्छी तरह आ गया होगा ? यदि आ गया तो बताओ ह्न

शरीर और जीव में कौन-सा अभाव है।''

श्रोता ह्न ''अत्यन्ताभाव! क्योंकि एक पुद्‌गल द्रव्य है और दूसरा जीव द्रव्य है और दो द्रव्यों के बीच होनेवाला अभाव ही अत्यन्ताभाव हैं।''

दूसरे श्रोता से प्रश्न ह्न ''टेबल और माईक में कौन-सा अभाव है ?''

श्रोता ह्न ''अन्योन्याभाव, क्योंकि टेबल और माईक दोनों पुद्‌गल द्रव्य की वर्तमान पर्यायें हैं।''

तीसरे श्रोता से प्रश्न ह्न ''यह वर्तमान राग मुझे जीवन भर परेशान करेगा' ऐसा मानने वाले ने कौन-सा अभाव नहीं माना ?''

श्रोता का उत्तर ह्न ''प्रध्वंसाभाव, क्योंकि वर्तमान राग का भविष्य की चारित्रगुण की पर्यायों में अभाव है, अत: वर्तमान राग भविष्य के सुख-दुख का कारण नहीं हो सकता।''

एक जिज्ञासु ने प्रश्न किया ह्न कृपया बतायें कि ह्न ''इन चार प्रकार के अभावों को समझने से क्या-क्या लाभ हैं ?''

अनेकान्त ने उत्तर में कहा ह्न ''अनादि से मिथ्यात्वादि महापाप करनेवाला आत्मा पुरुषार्थ करे तो वर्तमान में उनका अभाव कर सम्यक्त्वादि धर्म दशा प्रगट कर सकता है, क्योंकि वर्तमान पर्याय का पूर्व पर्याय में अभाव है, अत: प्रागभाव समझने से 'मैं पापी हूँ, मैंने बहुत पाप किये हैं, मैं कैसे तिर सकता हूँ ? आदि हीन भावना निकल जाती है।

प्रध्वंसाभाव के समझने से यह ज्ञान हो जाता है कि वर्तमान में कैसी भी दीन-हीन दशा हो, भविष्य में उत्तम से उत्तम दशा प्रगट हो सकती है; क्योंकि वर्तमान पर्याय का आगामी पर्यायों में अभाव है, अत: वर्तमान पामरता देखकर भविष्य के प्रति निराश न होकर पुरुषार्थ प्रगट करने का उत्साह जागृत होता है।''

जिज्ञासु ने निवेदन किया ह्न ''कृपया अन्योन्याभाव और अत्यन्ताभाव की स्वीकृति से क्या-क्या लाभ है ?''

अनेकान्त ने बताया कि ह्न ''अन्योन्याभाव की श्रद्धा से अभक्ष्य-भक्षण के विकल्प खत्म हो जाते हैं। **अल्प फल बहुविघात** जैसी पाप क्रियायें रुक जाती हैं; क्योंकि एक पुद्‌गल की वर्तमान पर्याय का दूसरे पुद्‌गल की वर्तमान पर्याय में अभाव है, अत: शरीर में अभक्ष्य पदार्थ से जब कुछ लाभ ही नहीं तो व्यर्थ में यह पाप क्यों करना ?

अत्यन्ताभाव यह बताता है कि दो द्रव्यों के बीच में जब वज्र की दीवार है, एक द्रव्य का दूसरे से कुछ भी संबंध नहीं है, ऐसी परिस्थिति में परद्रव्य हमारा कुछ भी भला-बुरा नहीं कर सकते। ऐसी श्रद्धा से पर के प्रति राग-द्वेष स्वत: कम होने लगते हैं और हम वीतराग धर्म की ओर अग्रसर होते हैं।

इसतरह चारों अभावों के समझने से स्वाधीनता का भाव जागृत होता है, पर से आशा की चाह समाप्त होती है, भय का भाव निकल जाता है, भूतकाल और वर्तमान की कमजोरी और विकार देखकर उत्पन्न होनेवाली दीनता समाप्त हो जाती है और स्वसन्मुख होने का पुरुषार्थ जागृत होता है। आशा है, अब तुम्हारी समझ में इनके जानने से क्या लाभ है, यह भी आ गया होगा ?''

अन्त में कुछ श्रोताओं से वक्ता ने पुनः कुछ प्रश्न किए, जिनके संतोषजनक उत्तर प्राप्त हुए। श्रोता ने कहा ह्न ''जो आपने समझाया, वह सब बहुत अच्छी तरह समझ में आ गया।''

''आ गया तो बताओ ! 'शरीर मोटा-ताजा हो तो आवाज भी बुलन्द होती है' ह्न ऐसा माननेवाला क्या गलती करता है ?''

उत्तर ह्न ''वह अन्योन्याभाव का स्वरूप नहीं जानता, क्योंकि शरीर का मोटा-ताजा होना आहार वर्गणारूप पुद्‌गल का कार्य है और आवाज बुलन्द होना भाषा वर्गणा का कार्य है। इन दोनों में अन्योन्याभाव है।

दूसरे श्रोता से प्रश्न ह्न ''ज्ञानावरणी कर्म के क्षय के कारण आत्मा में केवलज्ञान होता है' ऐसा माननेवाले ने क्या भूल की ?''

श्रोता का उत्तर ह्न ''उसने अत्यन्ताभाव को नहीं जाना, क्योंकि ज्ञानावरणी कर्म पुद्‌गल द्रव्य और आत्मा जीवद्रव्य है, दोनों में अत्यन्ताभाव है, फिर एक द्रव्य के कारण दूसरे द्रव्य में कार्य कैसे हो सकता है ?''

तीसरे श्रोता से प्रश्न ह्न ''शास्त्र में ऐसा क्यों लिखा है कि ज्ञानावरणी कर्म के क्षय से केवलज्ञान की प्राप्ति होती है ?''

श्रोता का उत्तर ह्न ''शास्त्र में ऐसा निमित्त का ज्ञान कराने के लिए असद्‌भूत व्यवहारनय से कहा जाता है, किन्तु वस्तुत: निश्चयनय से विचार किया जाय तो एकद्रव्य दूसरे द्रव्य के कार्य का कर्ता हो ही नहीं सकता।''

अनेकान्त ने कहा ह्न ''आपने मेरी बात को ध्यान से सुना; एतदर्थ धन्यवाद ! देखो, वस्तुस्वरूप तो अनेकान्तात्मक है। अकेला भाव ही वस्तु का स्वरूप नहीं है, अभाव भी वस्तु का धर्म है। उसे माने बिना वस्तु की व्यवस्था नहीं बनेगी। चारों अभावों का स्वरूप अच्छी तरह समझने से राग-द्वेषादि का स्वतःही अभाव हो जाता है।'' सभी श्रोता अभाव का स्वरूप समझकर राग-द्वेष का अभाव करने का प्रयत्न करें ह्न इसी भावना से विराम लेता हूँ। ●

जैन तिथिदर्पण
जैनपथप्रदर्शक,
२००६

जैन तिथिदर्पण
जैनपथप्रदर्शक, २००६

तत्वचर्चा

प्रवचनसार का सार

38

ह्र डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ....)

क्षयोपशम ज्ञान दो प्रकार से पाया जाता है। उपयोगरूप से एवं लब्धिरूप से। यहाँ शक्तिरूप से ह्र यह अपेक्षा नहीं लगा सकते हैं; क्योंकि शक्तिरूप से तो हमें केवलज्ञान है, दुनियाँ में जितनी भाषाएँ हैं, उन सबका ज्ञान हमें शक्तिरूप से है।

लब्धिरूपज्ञान पर्याय में प्रगट है। इसमें मात्र जिस ज्ञान का उपयोग कर रहे हैं, वही ज्ञान नहीं है; अपितु वह सम्पूर्ण ज्ञान है, जो उस पर्याय में उपलब्ध है। ऐसे ही स्व को जानते समय पर का ज्ञान विद्यमान है।

आत्मानुभूति के काल में सम्यग्दर्शन हुआ; पर जब उपयोग बाहर आया, तब भी सम्यग्दर्शन कायम रहता है। अनुभूति को यदि सम्यग्दर्शन कहा जाता तो अनुभूति खतम होते ही समयग्दर्शन खतम हो जाना चाहिए था। अनुभूति में जो त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा ज्ञान का ज्ञेय बना था, उपयोग में आया था, उसने श्रद्धागुण में जो अपनापन स्थापित कर लिया था; वह अपनापन अभी भी कायम है; इसलिए सम्यग्दर्शन कायम है, सम्यग्ज्ञान भी कायम है।

जब पर को जानते हैं, तब आत्मा का ज्ञान लब्धि में विद्यमान है और वहाँ सम्यग्ज्ञान भी विद्यमान है एवं दो या तीन कषाय के अभावरूप चारित्रगुण में जितनी शुद्धि हुई है, उतना चारित्र भी विद्यमान है।

भोग के काल में भी एवं युद्ध के समय में भी रत्नत्रय अर्थात् मोक्षमार्ग विद्यमान है। चक्रवर्ती लड़ाई कर रहा है तो भी उसके मोक्षमार्ग विद्यमान है, उसके असंख्यगुणी निर्जरा हो रही है।

जैसाकि तत्त्वार्थसूत्र के नौवें अध्याय के पैंतालीसवें सूत्र में कहा हैह्र

''सम्यग्दृष्टिश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्तमोहक्षपकक्षीणमोहजिना: क्रमशोऽसंख्येयगुण निर्जरा:।

सम्यग्दृष्टि, पंचमगुणस्थानवर्ती श्रावक, विरत-मुनि, अनन्तानुबन्धी का विसंयोजन करनेवाला, दर्शनमोह का क्षय करनेवाला, उपशमश्रेणी माँडनेवाला, उपशांतमोह, क्षपकश्रेणी मांडनेवाला, क्षीणमोह और जिन ह्र इन सबके (अंतर्मुहूर्तपर्यन्त परिणामों की विशुद्धता की अधिकता से आयुकर्म को छोड़कर) प्रतिसमय क्रम से असंख्यातगुणी निर्जरा होती है।''

जो दो का ज्ञान एकसाथ नहीं हो सकता ह्र ऐसा मानते हैं; उनका आशय यह है कि जब हमें खाने-पीने का ज्ञान रहता, तब आत्मज्ञान नहीं रहता। जिस समय मैं आत्मा को समझा रहा हूँ; उस समय मेरा उपयोग भाषा पर है, समझाने पर है, श्रोताओं पर है; क्या उस समय मुझे आत्मज्ञान नहीं है ? श्रोताओं को समझाने की प्रक्रिया भी चल रही है और आत्मज्ञान भी है। इसप्रकार इन अनेक पदार्थों का ज्ञान एकसाथ होने में कोई समस्या नहीं है।

यह भ्रम हमें अपने मस्तिष्क से निकाल देना चाहिए कि एक समय में एक को ही जान सकते हैं; इसलिए यदि पर को जानेंगे तो स्व को नहीं जान पायेंगे। अत: स्व को जानने के लिए पर को जानना बाधक है, शत्रु है। अरे भाई ! इसप्रकार पर के जानने को शत्रु की श्रेणी में मत रखो; क्योंकि इसमें ज्ञानस्वभाव का निषेध हो जाता है।

कर्म से उत्पन्न सुख-दु:ख वह कर्म फल है। वहाँ द्रव्यकर्मरूप उपाधि की निकटता के असद्भाव के कारण जो कर्म होता है, उसका फल अनाकुलत्व लक्षण प्रकृतिभूत सुख है और द्रव्यकर्मरूप उपाधि की निकटता के सद्भाव के कारण जो कर्म होता है, उसका फल विकृति (विकार) भूत दु:ख है; क्योंकि वहाँ सुख के लक्षण का अभाव है।

कर्मचेतना में कर्तृत्व की मुख्यता रहती है एवम् कर्मफलचेतना में भोक्तृत्व की मुख्यता रहती है। इसप्रकार आचार्य ने ज्ञानचेतना, कर्मचेतना एवं कर्मफलचेतना का स्वरूप समझाया।

क्या क्षयोपशमज्ञान, ज्ञान नहीं है; क्योंकि ज्ञान का लक्षण स्वपरावभासन है; उसका लक्षण अर्थविकल्पात्मक है। यह लक्षण क्षयोपशमज्ञान रूप सम्यग्ज्ञान में भी घटित होगा एवं मिथ्याज्ञान में भी घटित होगा। यह लक्षण सम्पूर्ण ज्ञानपर्याय में निगोद से लेकर मोक्ष तक की पर्यायों में घटित होगा। तभी वह ज्ञान का लक्षण कहलायेगा, अन्यथा वह ज्ञान का लक्षण नहीं कहलायेगा।

'ज्ञेयपने को प्राप्त आत्मा की शुद्धता' ह्र ऐसा कहकर आचार्य यह कहना चाहते हैं कि ज्ञानतत्त्वप्रज्ञापन महाधिकार में जिसकी चर्चा की गई थी, वह आत्मा के जाननेवाले स्वभाव की बात थी और यहाँ जिस आत्मा की चर्चा है, वह ज्ञेयभूत आत्मा की बात है। आत्मा ज्ञेय है अर्थात् एक अर्थ है, एक वस्तु है।

वह ज्ञेयरूप आत्मा ज्ञानचेतना, कर्मचेतना एवं कर्मफलचेतनावाला है। ज्ञेयतत्त्व को प्राप्त आत्मा की शुद्धता के निश्चय से ज्ञानतत्त्व की सिद्धि होने पर उस आत्मा का स्वभाव ही यदि ज्ञान है तो उस ज्ञेयरूप आत्मा का वर्णन ज्ञानरूप से ही करेंगे।

जिसप्रकार पुद्गल भी एक ज्ञेय है और उसका स्वभाव स्पर्श, रस, गंध, वर्ण है। यदि पुद्गल की ज्ञेयरूप से चर्चा करेंगे तो स्पर्श, रस, गंध, वर्ण की चर्चा भी आयेगी।

इसीप्रकार आत्मा की ज्ञेयरूप से चर्चा होगी तो उसमें आत्मा के स्वभाव की भी चर्चा होगी। आचार्य ने उपसंहार में यह कहा कि ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापन में ज्ञानस्वभावी जो स्वज्ञेय है; उसकी उपलब्धि होगी और इसी कारण से ज्ञेयतत्त्वप्रज्ञापनाधिकार को सम्यग्दर्शनाधिकार भी कहा जाता है।

१२६ वीं गाथा में अत्यन्त स्पष्टरूप से कहा गया है कि जिस श्रमण ने यह निश्चित किया है कि यह आत्मा ही ज्ञानचेतना, कर्मचेतना एवं कर्मफलचेतना का कर्त्ता है, कर्म है, करण है; सबकुछ आत्मा के भीतर ही है। परद्रव्य का इसमें कुछ हस्तक्षेप नहीं है ह्र वह श्रमण अन्यरूप परिणमित नहीं होता अर्थात् द्रव्यकर्मों का कर्त्ता नहीं बनता, सम्पूर्ण विश्व का कर्त्ता-भोक्ता नहीं बनता; उनके साथ कर्त्ता, कर्म, करण आदि कारकरूप संबंध स्थापित नहीं करता। ऐसा श्रमण शुद्धात्मा को प्राप्त करता है।

आचार्य यहाँ कह रहे हैं कि ऐसा नहीं है कि मैं ज्ञानी हो गया हूँ;

इसलिए स्त्री-पुत्र-मकान-जायदाद और द्रव्यकर्म-भावकर्म मेरे नहीं रहे हैं। जब मैं इन सबको अपना मानता था; तब भी ये मेरे नहीं थे; न मैं इनका कर्त्ता था, न करण था, न कर्म था, न कर्मफल भोक्ता था।

ऐसा कहते हुए कई व्यक्ति दिखाई देते हैं कि भाई! मैंने अज्ञानावस्था में बहुत कुछ किया; अब जब से मैं आपके समागम में आया हूँ तो मैंने वे सब काम बंद कर दिये हैं, अब तो मैं केवल अपने आत्मा का ही करता हूँ और कुछ नहीं। पहले मैंने बहुत किया है।

अरे भाई! इस आत्मा ने अनादि से पर में कुछ किया ही नहीं है; क्योंकि दोनों के बीच वज्र की दीवार खड़ी है। यहाँ आचार्यदेव ने ज्ञानी को ज्ञानभाव का, एवं अज्ञानी को अज्ञानभाव का कर्त्ता कहा है। यदि ऐसा नहीं मानेंगे तो संसार का अभाव हो जायेगा; क्योंकि संसार में हम इसी वजह से हैं।

यदि हम उसके कर्त्ता है ही नहीं तो उसके फल के भोक्ता भी नहीं होना चाहिये। अनादिकाल से हम निगोद में रहे हैं, निगोद भी पर्याय है एवं मोक्ष भी पर्याय है; परंतु यह तथ्य भी सम्पूर्ण सत्य है कि जब यह जीव निगोद से लेकर मोक्ष तक की सभी पर्यायों से एकत्वबुद्धि तोड़कर त्रिकाली ध्रुव में एकत्वबुद्धि करेगा, तभी सम्यग्दर्शन होगा।

कुछ लोग कहते हैं कि जीवों का घात तो व्यवहारहिंसा है और व्यवहार तो असत्यार्थ है; मैं उनसे कहना चाहता हूँ कि उक्त हिंसा के फल में नरक में जाना पड़ेगा ह्न यह बात असत्य है या सत्य ? यदि सत्य है तो व्यवहारहिंसा से भी बचना चाहिए।

मैं आपसे ही पूछता हूँ ये राग भी तो व्यवहार है; परंतु क्या इसके फल में स्वर्ग-नरक नहीं है ?

यहाँ आचार्य ने जवाकुसुम का उदाहरण दिया है। जवाकुसुम को यदि स्फटिकमणि में लगा दो तो वह मणि जवाकुसुम जैसा ही दिखने लगता है। जबतक जवाकुसुम उस मणि में नहीं है, तबतक वह निर्मल है। जब जवाकुसुम का लालरंग उसमें से दिखाई दे रहा है; तब भी वैसा ही निष्कलंक है; जैसा वह पूर्व में था। अंतर इतना ही है कि अब वह जवाकुसुम के रंग के अनुरूप दिखाई दे रहा है। ऐसे ही आत्मा निगोद से मोक्ष तक एक-सा ही रहेगा; यही उसकी अनन्यता है। आगे आचार्यदेव ने यह स्पष्ट किया है कि बंधमार्ग में और मोक्षमार्ग में यह आत्मा अकेला ही है ह्न यही है एकत्वभावना।

यदि बंधमार्ग में अपने कार्यों का जिम्मेदार मैं स्वयं नहीं हुआ तो मोक्षमार्ग भी मेरे हाथ से निकल जायेगा। ज्ञानी का राग चारित्र की कमजोरी है; उसे अज्ञानभाव नहीं कहा जा सकता ?

अब प्रश्न यह है कि ज्ञानी उस राग का कर्त्ता है या नहीं ?

ज्ञानी की उसमें कर्तृत्वबुद्धि नहीं है; इसलिए ज्ञानी उसका कर्त्ता नहीं है। ज्ञानी जीव के अनन्तानुबंधी संबंधी रागभाव तो है ही नहीं; अत: उसका कर्ता होने का तो प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता। अप्रत्याख्यानादि संबंधी जो राग है; ज्ञानी उसरूप परिणमता है; अत: वह उसका कथंचित् कर्ता कहा है; किन्तु उसमें कर्तृत्वबुद्धि नहीं है; अत: कथंचित् अकर्ता भी कह सकते हैं।

यहाँ सर्वथा कर्त्ता नहीं है ह्न ऐसा नहीं कहा है। यहाँ कथंचित् कर्त्ता नहीं है - ऐसा कहा है। यदि सर्वथा कहते तो जिन प्रकृतियों का बंध है, वह नहीं होना चाहिए। जब यह जीव उनका कर्त्ता नहीं है तो जीव के साथ उन प्रकृतियों का बंध क्यों होता है ?

ज्ञानी उस रागरूप स्वयं परिणमित हुआ है; परंतु उसकी वहाँ कर्तृत्वबुद्धि नहीं है। वह उसे करने योग्य नहीं मानता है। उसने वहाँ एकत्व, ममत्व, कर्तृत्व, भोक्तृत्वबुद्धि तोड़ दी है। इस अपेक्षा से उसे अकर्त्ता कहा जाता है। समयसार में यही मुख्य अपेक्षा है।

वहाँ ऐसा लिखा है कि अशुद्धनिश्चयनय से कर्त्ता है; परंतु अशुद्धनिश्चयनय तो अज्ञानी के ही घटित होता है; वह ज्ञानी के घटित नहीं होता है ।

तब फिर 'बृहद्‌द्रव्यसंग्रहादिक' में यह प्रश्न किया कि ज्ञानी परमशुद्धनिश्चयनय से उसका कर्त्ता है या नहीं ?

इसका उत्तर वहाँ इसप्रकार दिया है कि परमशुद्धनिश्चयनय से वह राग ही नहीं है अर्थात् राग का त्रिकाली ध्रुव में कोई अस्तित्व ही नहीं है।

पीली हल्दी और सफेद चूना मिलकर लाल रंग हो जाता है। इसमें हल्दी लाल होती है या चूना लाल होता है ? ऐसा भी कह सकते हैं कि हल्दी के संयोग से चूना लाल हो गया है एवं ऐसा भी कह सकते हैं कि चूने के संयोग से हल्दी लाल हो गई है। इसप्रकार भी कह सकते हैं कि दोनों मिलकर लाल हो गये हैं; परंतु परमशुद्धनिश्चयनय ऐसा कहता है कि हल्दी व चूना कभी मिलते ही नहीं है। हल्दी अभी भी पीली है एवं चूना अभी भी सफेद है; वे मिलते ही नहीं हैं।

ऐसे ही कहते हैं कि परमशुद्ध निश्चयनय से राग है ही नहीं। तब उसके कर्त्ता होने का सवाल ही खड़ा नहीं होता है।

इसप्रकार आचार्य ने प्रवचनसार में द्रव्यसामान्यप्रज्ञापनाधिकार में पहले उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य, स्वरूपास्तित्व, सादृश्यास्तित्व, महासत्ता, अवान्तरसत्ता आदि सबका विस्तार से स्वरूप बताकर उसे आत्मा पर घटित करके, आत्मा के षट्कारक स्वयं पर ही घटित करके इस अधिकार का समापन किया है। ●

अबके ऐसी दिवाली मनाऊँ

अबके ऐसी दिवाली मनाऊँ, कबहूँ फेर न दु:खड़ा पाऊँ ।। टेक।।
आन कुदेव कुरीति छाँड़ के, श्री महावीर चितारूं।
राग-द्वेष का मैल जलाकर, उज्ज्वल ज्योति जगाऊँ।।
अपनी मुक्ति-तिया हर्षाऊँ, अबके ऐसी दिवाली मनाऊँ।।१।।
निज अनुभूति महालक्ष्मी का, वास हृदय करवाऊँ।
निजगुण लाभ दोष टोटे का, लेखा ठीक लगाऊँ ।।
जासो फेर न टोटा पाऊँ, अबके ऐसी दिवाली मनाऊँ।।२।।
ज्ञान-रतन के दीप में, तप का तेल पवित्र भराऊँ।
अनुभव ज्योति जगा के, मिथ्या अन्धकार विनशाऊँ।।
जासों शिव की गैल निहारूँ, अबके ऐसी दिवाली मनाऊँ।।३।।
अष्ट करम का फोड फटाका, विजयी जिन कहलाऊँ।
शुद्ध बुद्ध सुखकन्द मनोहर, शील स्वभाव लखाऊँ।।
जासों शिवगोरी बिलसाऊँ, अबके ऐसी दिवाली मनाऊँ।।४।।

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

वैराग्य समाचार....

१. विदुषी ब्र. सुशीलाजी का देहविलय ह्न

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सान्निध्य में रहकर धर्मसाधना करनेवाली ब्रह्मचारिणी बहनों में वरिष्ठ व विदुषी ब्र. सुशीलाजी का दिनांक १२ अक्टूबर, २००५ को सायंकाल देहविलय हो गया। आपके जाने से मुमुक्षु समाज की अपूरणीय क्षति हुई है।

आपने स्थानकवासी सम्प्रदाय में साध्वी की दीक्षा ली थी, लेकिन गुरुदेवश्री की प्रेरणा से दिगम्बर धर्म स्वीकार किया व उनके ही सान्निध्य में रहकर तत्त्वज्ञान का गहरा अध्ययन किया। आपकी तत्त्व की पकड़ बहुत सूक्ष्म थी। गुरुदेवश्री भी आपकी प्रशंसा किया करते थे।

गुरुदेव के पश्चात् गुजरात ही नहीं, हिन्दी प्रान्त में भी तत्त्वप्रचार-प्रसार में आपका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। आप अनेक नगरों में महिनों रहकर कक्षाएँ लेती थीं। आपकी शैली बड़ी सुबोध व सरल थी। जयपुर में पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट द्वारा संचालित गतिविधियों से प्रभावित थी तथा महाविद्यालय के छात्रों से भी आपको बहुत स्नेह था।

२. जैन विद्वत् परम्परा की एक और कड़ी टूटी ह्न

जैनदर्शन के प्रख्यात विद्वान विशिष्ट प्रतिभा के धनी डॉ. देवेन्द्रकुमारजी शास्त्री नीमच का ११ अक्टूबर, २००५ को अहमदाबाद (गुज.) में देहावसान हो गया है। आपके जाने से प्राचीन जैन विद्वत्परंपरा की एक और कड़ी टूट गई। इससे जैनसमाज की अपूरणीय क्षति हुई है।

आपका जन्म चिरगाँव, जिला-झांसी (उ.प्र.) में हुआ था। शासकीय महाविद्यालय नीमच (म.प्र.) में आप हिन्दी के प्राध्यापक के रूप में अनेक वर्षों तक कार्यरत रहे। हिन्दी के विभागाध्यक्ष भी रहे।

शासकीय सेवा से निवृत्त होने के बाद भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित जैन साहित्य के प्रकाशन व सम्पादन में अपना बहुमूल्य योगदान प्रदान किया। वीतराग सत्श्रुत प्रभावना ट्रस्ट, भावनगर द्वारा शास्त्र भण्डारों एवं प्राचीन पाण्डुलिपियों के सूचीकरण के कार्य में आपका महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा। अभी आप भाण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूणे (महा.) के अनुबन्ध पर अपभ्रंश व प्राकृत का बृहद्शब्दकोश बनाने में संलग्न थे।

जैन तत्त्वज्ञान के प्रचार-प्रसार में अपना अपूर्व योगदान देनेवाली उक्त दोनों आत्माओं को पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धान्त महाविद्यालय एवं वीतराग-विज्ञान (मासिक) परिवार श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये भावना भाता है कि दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही सिद्धत्व को प्राप्त करे। साथ ही आपके परिजन तत्त्वज्ञान के अवलम्बन से धैर्य धारण करें। ॐ शांति ! शांति !! शांति !!!

ध्यान दें !

साधना चैनल पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के प्रवचन प्रतिदिन रात्रि 10.20 से 10.40 बजे तक प्रसारित हो रहे हैं। प्रसारण में किसी वजह से 5-7 मिनिट की देर भी हो सकती है।

यदि निर्धारित समय से 10 मिनिट बाद तक भी प्रवचन प्रारंभ नहीं हो तो श्री पीयूषकुमारजी शास्त्री से 09414717829 या (0141) 2705581 नं. पर सम्पर्क करें।

संक्षिप्त समाचार

※ कांग्रेस सांसद सदस्य एवं फिल्म अभिनेता गोविन्दा के अन्डर्वर्ल्ड डोन दाउद के साथ सम्बन्धों की आशंका। कई अन्य अनेक राजनैतिक एवं फिल्मी हस्तियों पर भी गिर सकती है गाज।

※ मैक्सिको में आये भयंकर समुद्री तूफान विल्मा ने कैरेबियन तट पर भारी तबाही मचाई।

※ भारत ने पीओके के भूकम्प पीड़ितों की मदद के लिये एक असाधारण मानवीय कदम उठाते हुये जम्मू-कश्मीर में वास्तविक नियंत्रण रेखा पर मदद के लिये तीन स्थान खोलने की पेशकश की। पाकिस्तान ने भी पाँच स्थान तय करने का प्रस्ताव किया।

※ श्रीलंका एवं दक्षिण अफ्रीका दौरे के लिये राहुल द्रविड को भारतीय टीम का कप्तान नियुक्त किया गया।

※ राजस्थान विश्वविद्यालय से कई महत्त्वपूर्ण दस्तावेजों की डकैती।

आगामी कार्यक्रम.....

1. राजस्थान की प्रसिद्ध नगरी मदनगंज-किशनगढ़ में **दिनांक १६ नवम्बर से २१ नवम्बर २००५** तक डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल आदि विशिष्ट विद्वानों के सान्निध्य में पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का अभूतपूर्व आयोजन होने जा रहा है। प्रतिष्ठा विधि के कार्य प्रतिष्ठाचार्य ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री के निर्देशन में सम्पन्न होंगे। अपने पधारेने की पूर्व सूचना 09352011757 या 09829064980 पर देवें।

ह्न प्रतिष्ठा महोत्सव समिति मदनगंज-किशनगढ़

2. पश्चिम बंगाल की राजधानी **आमादेर कोलकाता** में श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मन्दिर ट्रस्ट के अन्तर्गत श्री 1008 महावीर स्वामी दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का आयोजन **दिनांक 26 दिसम्बर से 1 जनवरी, 2006** पर्यन्त देश के ख्यातिप्राप्त विद्वानों की उपस्थिति में सम्पन्न होने जा रहा है, आप सभी को हमारा भावभीना आमंत्रण है।

ह्न प्रतिष्ठा महोत्सव समिति भवानीपुर, कोलकाता

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) नवम्बर (प्रथम)2005
J. P. C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा,**डबल एम.ए. जैनविद्या व धर्मदर्शन तथा इतिहास, नेट एवं **पण्डित जितेन्द्र वि.राठी,** साहित्याचार्य
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127